- पर्णीय छिडकाव के लिए फफूंदनाशी जैसे मैंकोजेब (2.0 ग्राम) प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल से दो बार छिडकाव करें।

मुख्य कीट एवं उनका प्रबंधन

- **तम्बाकू की इल्ली (कैटरपिलर) :** मादा शलभ रात्रि में पत्तियों के नीचे समूह में अण्डे देती है, जिनसे 8 से 13 दिनों में छोटी इल्लियां बाहर आती हैं और 4 से 5 दिनों तक समूह में रहकर पत्तियों को खुरचकर खाना शुरू करती है। इनका रंग गहरा हरा होने के साथ–साथ शरीर पर काले रंग की त्रिभुजाकार सरंचना भी होती है। ये पौधों की पत्तियों, फूलों व नये शीर्ष भाग को खाकर नष्ट करती है। पत्तियों पर उपस्थित छेद से इनकी उपस्थिति का पता लगाया जा सकता हैं। ये पत्तियों को खा कर जाली नुमा संरचना बना देती है तथा बाद में पुष्प कलिकाएँ और फलियों को भी खाकर नुकसान पहुँचाती हैं। खेत में जगह–जगह सुखी घास के छोटे–छोटे ढेर को रख देने से दिन में कटुआ कीट की सुड़ियाँ छिप जाती है जिसे प्रातःकाल इकटठा कर नष्ट कर देना चाहिए। चने के साथ अलसी, सरसों, धनियाँ की सहफसली खेती करने से फली बेधक कीट से होने वाली क्षति कम हो जाती है। खेत के चारों ओर गेंदे के फूल को ट्रैप क्राप के रूप में प्रयोग करना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में 50–60 बर्ड पर्चर लगाना चाहिए, जिस पर चिड़ियाँ बैठकर सुडियों को खा सके। फूल एवं फलियां बनते समय फली बेधक कीट के लिए 5 फेरोमोन ट्रेप गंधपाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में लगाना चाहिए। एजाडिरैक्टिन 0.03 प्रतिशत डब्लू.एस.पी. 2.5–3.00 किलो. ध्हे. की दर से डालना चाहिये।
- **सफेद मक्खीः** यह कीट आकार में बहुत छोटे होते हैं तथा इनका रंग सफेद धुँए जैसा होता है। मादाएं पत्तियों के नीचे अलग–अलग व हल्के पीले रंग के अंडे देती हैं जोकि बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। यह बहुत ही आक्रामक प्रकृति के होते है और एक छोटी सी आहट से ही एक से दूसरे पौधों तक पहुंच जाते हैं। यह पौधों की पत्तियों में नीचे की ओर चिपक जाती हैं तथा रस चूस कर पत्तियों को रंगहीन या पीला कर देते हैं जिससे पौधों में भोजन बनाने की क्षमता कम तथा उत्पादन भी कम हो जाती है। ये मखियाँ उर्द में पीत चितेरी रोग के लिए वाहक का कार्य भी करते है।एसीटामिप्रिड 20 एस.पी. की 50 ग्राम ग्राम 600 लीटर पानी में मिलाकर या इमिडाक्लोपिड 17.8 एस. एल. 0.2 मिली. प्रति लीटर पानी के साथ मिलाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।
- **फली भेदक :** इन फसलों में दो प्रकार के फली भेदकों का आक्रमण होता है– हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा व मारुका टेस्टूलालिस। दोनों कीटों की इल्लियां फलियों में बन रहे दानो को खाकर नष्ट करती है। फसल की वनस्पतिक अवस्था पर इनका प्रभाव होने से प्रभावित पौधा पत्तियों रहित हो सकता है। हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा की इल्लियां फलियों में अपना सिर डालकर दानो को खाती है जबकि मारुका टेस्टूलालिस की इल्लियां फलियों में अन्दर भी रहकर वृधि कर रहे दानों को खाकर नष्ट करती है। इन कीटों की इल्लियां पौधों के सभी भागो को खाकर नष्ट कर सकती है। परन्तु ये पौधे के कोमल भागों को ज्यादा पसंद करती है। नियंत्रण के लिए तम्बाकू की इल्ली के लिए दिए गए सुझाव अपनाये।
- **माहू (एफिड):** माहू का प्रकोप बुंदेलखंड क्षेत्र में और दलहनी फसलों पर कम होता है, लेकिन यदि बादल की उपस्थिति कुछ समय के लिए बनी रहती है तो यह अपनी जनसंख्या को अत्यधिक तेजी से बढ़ाते हैं और फसलों को अत्यधिक क्षति पहुचाते हैं। इनके प्रौढ़ चमकीले काले रंग के होते हैं। इनके निम्फ और प्रोढ़, पौधों के कोमल भागों से रस चूसते रहते हैं जोकि बहुत अधिक संख्या में दिखाई देते हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियाँ ऐंठ जाती हैं। माहू अपने शरीर से एक मीठा पदार्थ निकलते रहते हैं। बाद में इस पदार्थ के ऊपर तना सड़न पैदा करने वाले कवक का विकास होने के कारण पौधों की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। माहू विषाणु जनित रोगों के वाहक का भी कार्य करती है। नियंत्रण के लिए माहू के लिए दिए गए सुझाव अपनाये।
- **तैला कीट (थ्रिप्स):** ये आकार में छोटे और पत्तियों के नीचे की सतह पर रह कर रस चूसते रहते हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियों पर चमकीले रंग के धब्बे नजर आते हैं तथा इसके द्वारा सबसे अधिक नुकसान फूल बनने की अवस्था पर होता है, जिसके कारण प्रभावित पौधे फूलरहित हो जाते हैं और जिसका सीधा प्रभाव फसल उत्पादन पर पड़ता है। नियंत्रण के लिए माहू के लिए दिए गए सुझाव अपनाये।

कटाईः मूँग की नई किस्में ज्यादातर एक साथ पककर तैयार हो जाती है। इन नई किस्मों को उगाने वाले किसानों को एक बात ध्यान में रखना चाहिए कि जब 75 प्रतिशत फलियाँ पक जाये या काली पड़ने लगे तो उसके बाद सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए अन्यथा सारी फलियाँ एक साथ नही पके सकेंगी एवं कटाई में परेशानियों का सामना करना पड़ सकता हैं ।

भण्डारणः भण्ड़ारण करने से पूर्व दानों को अच्छी तरह धूप में सुखा ले तथा जब उसमें नमी की मात्रा 8 से 10 प्रतिशत रह जाये, तभी भण्डारण किया जाना चाहिए ताकि उनमें कीट या बीमारियों का प्रकोप न हो सके।

उपजः समुचित फसल प्रबंधन होने पर खरीफ की फसलसे 8 से 10 कु./हे. व जायद की फसल से 10 से 12 कु./हे. मूँग का उत्पादन हो जाता है।

प्रशासनिक भवन

शैक्षणिक भवन

विशेष जानकारी हेतु सम्पर्क करें:
डॉ. एस.एस. सिंह
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रसार शिक्षा निदेशालय
दूरभाष : +91–789746699
ई–मेल : directorextension.rlbcau@gmail.com

प्रकाशितः
कुलपति
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी 284003, उत्तर प्रदेश (भारत)

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381

68

प्र.शि.नि./त.प्र.सा.-फोल्डर/2023/

बुन्देलखण्ड में मूँग की वैज्ञानिक खेती

सुन्दर पाल, मीनाक्षी आर्य, अंशुमान सिंह,
अखोरी निशांत भानु, अर्पित सूर्यवंशी,
संजीव कुमार एवं सुशील कुमार चतुर्वेदी

प्रसार शिक्षा निदेशालय
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी 284003, उत्तर प्रदेश (भारत)
वेबसाईट : www.rlbcau.ac.in

बुन्देलखण्ड में मूँग की वैज्ञानिक खेती

दलहनी फसल मूँग कम अवधि में पकने वाली फसल है। अतः इन फसलों की खेती ग्रीष्म एवं खरीफ दोनों ही मौसम में सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसके दाने का प्रयोग मुख्य रूप से दाल के लिये किया जाता है। इसमे 24–26 प्रतिशत प्रोटीन, 55–60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट एवं 1.3 प्रतिशत वसा होती है। दलहनी फसल होने के कारण यह मृदा की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाती है।

जलवायुः मूँग के लिए नम एवं गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी वृद्धि एंव विकास के लिए 25–32 डिग्री सेंट्रीग्रेट तापमान अनुकूल पाया गया है। मूँग के लिए 750 से 900 मि. मी. वर्षा वाले क्षेत्र उपर्युक्त पाये गये है।

भूमि की तैयारीः इसकी खेती के लिए बलुई–दोमट से दोमट समतल मृदा उपर्युक्त होती है। जिस खेत में लवणीय तथा क्षारीय मिट्टी हो और जल निकासी का पर्याप्त प्रबंधन न हो वे खेत मूँग के लिए उपर्युक्त नहीं है। खरीफ की फसल हेतु एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करना चाहिए एंव वर्षा प्रारंभ होते ही 2–3 बार देशी हल या कल्टीवेटर से जुताई कर खरपतवार रहित करने के उपरान्त खेत मे पाटा चला कर समतल कर देना चाहिए ।

बुआई का समय एवं तरीकाः मूँग की बुआई खरीफ में जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए एवं ग्रीष्म कालीन मूँग की बुआई फरवरी माह के अंतिम सप्ताह से मार्च माह के दूसरे सप्ताह तक कर देनी चाहिए। खरीफ में कतार–से–कतार की दूरी 30 से.मी. व पौधे–से–पौधे की दूरी 10 से.मीं. और गहराई 4–5 से.मी. होनी चाहिए। इसी तरह जायद में कतार–से–कतार की दूरी 20–25 से. मी. रखना चाहिये जिससे की खरीफ की अपेक्षा अधिक पौध संख्या प्रति हे. प्राप्त हो।

बीज दर एवं बीज उपचारः खरीफ में मूँग की बुआई के लिए 16–20 कि.ग्रा.⁄हे. पर्याप्त होता है। बुआई से पूर्व बीजों को कार्बेन्डाजिम 2 ग्रा. या कार्बेन्डाजिम 1 ग्रा. थायरम 2 ग्रा. या ट्रायकोडर्मा 4 ग्रा. कार्वोक्सिन 1 ग्रा. से प्रति कि.ग्रा. बीज उपचार करें।

खाद एवं उर्वरकः सामान्य अनुशंसा के अनुसार 20 कि.ग्रा. नत्रजन 50 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. ग्राम पोटाश प्रति हे. की आवश्यकता होती है। सही मात्रा में खाद प्रबंधन द्वारा उत्पादन में बढ़ोतरी की जा सकती है ।

सिंचाई एवं जल निकासः मूँग की खरीफ फसल में सिचाई की आवश्यकता नही पड़ती है, फिर भी यदि इस मौसम में दो वर्षा के बीच लम्बा अंतराल होने पर अथवा नमी की कमी होने पर, फलियां बनते समय एक हल्की सिंचाई आवश्यक होती है। जायद मूँग में खरीफ की तुलना में जल की अधिक आवश्यकता होती है। यदि बुआई के समय खेत में पर्याप्त जल उपलब्ध नही हो तब बुआई के बाद सिचाई करना चाहिए।

खर पतवार प्रबंधनः मूँग फसल में खर पतवार नियंत्रण की कमी होने पर उपज में 25 से 50 प्रतिशत तक की हानि हो सकती हैं। प्रथम निदाई व गुडाई, बुआई के 20–25 दिन के अन्दर व दूसरी 40–50 दिन में करना चाहिए। खरपत नियंत्रण हेतु नीदनाशक दवाइयां जैसे बासलीन या पैन्डामैथालीन का प्रयोग भी किया जा सकता है। मूँग के लिए बासलीन नामक दवा का 1.5 ली. प्रति हे. की दर से 400 ली. पानी में घोलकर बुआई से पहले छिडकाव किया जा सकता है। इसके छिड़कने के तुरन्त बाद इसको भूमि की ऊपरी सतह में मिला देने चाहिए या फिर पेण्डीमथलीन नामक दवा का 1.5 लीटर प्रति हे. की दर से 400 ली. पानी में घोलकर बुआई के 1 से 2 दिन बाद एवं अंकुरण से पहले छिड़काव किया जा सकता है। खरपतवार नियंत्रण हेतु फसलचक्र, अंतः फसल प्रणाली, पौधों की उचित संख्या, ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई आदि प्रमुख विधियाँ हैं।

मूँग की उन्नत किस्में

उत्तर प्रदेश और बुन्देलखण्ड क्षेत्रों बोई जाने वाली मूँग की विभिन्न किस्मों का विवरण

किस्में	वर्ष	अवधि (दिन)	उपज (कुं/हे.)	मुख्य विशेषताएँ
आईपीएम 512–1	2020	60–65	11–12	पीला चित्तवर्ण रोग सेरकोस्पोरा लीफ स्पॉट और एन्थ्रेक्नोज के प्रतिरोधी
आईपीएम 409–4	2020	65–70	8–10	पीला चित्तवर्ण रोग के लिए प्रतिरोधी
पूसा 1431	2018	56–66	12–14	पत्तियों के धब्बे, अंगमारी , पत्तियों के धब्बे, अंगमारी, एन्थ्रेक्नोज और यूएलसीवी के प्रतिरोधी
विराट (आईपीएम 205–7)	2016	52–55	10–12	जल्दी पकने वाली मूंग की किस्म, पीला चित्तवर्ण रोग और खस्ता फफूंदी के लिये अत्यधिक प्रतिरोधी
शिखा	2016	65–70	13–15	पीला चित्तवर्ण रोग और खस्ता फफूंदी के लिये अत्यधिक प्रतिरोधी
वर्षा	2016	65–70	12–14	पीला चित्तवर्ण रोग के लिये अत्यधिक प्रतिरोधी

प्रमुख रोग एवं प्रबंधन :

विषाणु जनित रोग

➢ **पीला मोजेक (पीला चित्त्वर्ण) रोगः** सफेद मक्खी इस विषाणु जनित रोग का वाहक हैं जो इस एक रोगी पौधे से दूसरे स्वस्थ्य पौधे तक पहुँचता है। यह विषाणु एक मौसम से दूसरे मौसम तक जीवित रह सकता हैं तथा इससे उपज में 10 से 100 प्रतिशत तक की हानि हो सकती है। शुरुआत में नई पत्तियों पर पीले रंग के चितीदार छोटे–छोटे धब्बे बनते है जो बाद में एक साथ मिलकर तेजी से फैलते हैं और बड़े–बड़े धब्बो में बदल जाते हैं। अंततः पत्तियाँ पूर्ण रुप से पीली पड़ जाती हैं। पौधे देर से परिपक्व तथा फूल व फलियां भी स्वस्थ्य पौधों की अपेक्षा बहुत ही कम लगती हैं। फलियां कम तथा आकार में छोटी तथा उनका रंग भी पीला दिखाई पड़ता हैं ।

➢ **पत्ती शिकनः पत्ती ऐंठन/झुर्रीदार पत्ती रोगः** यह विषाणु जनित रोग माहू और सफेद मक्खी द्वार फैलता है। यह रोग मुख्यतः नई कलिकाओं और पत्तियों पर दिखाई देते हैं। इसमे पार्श्व शिराएं और तनों के निकट गहरा हरे रंग का संक्रमण होता है। इस विषाणु द्वारा अगर पौधा अपनी प्रारम्भिक अवस्था में संक्रमित हो तो शत प्रतिशत हानि भी हो सकती है। बुआई के पांच सप्ताह बाद नई कलियों में सड़न पैदा हो जाती है जिसके फलस्वरूप पौधे प्रारंभिक अवस्था में ही मरने लगते है तथा परिपक्व पौधों में रोगी पौधे की पत्तियां कुंडलाकार नीचे की ओर मुड़ जाती है। पत्तियों की शिराएं हरे रंग से लालिमायुक्त भूरे रंग में परिवर्तित हो जाती है तथा बाद में ये रंग पत्तियों के डंठल तक पहुँच जाता है। इस रोग का फैलाव संक्रमित बीज तथा रोगी पौधे की पत्तियों के स्वस्थ पौधों के साथ रगड़ने से भी उनको संक्रमित करती है।

विषाणु जनित रोगों का नियंत्रणः

- रोग सहनशील तथा प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।
- रोगी पौधों को उखाड़ कर जला दें या गहरी मिट्टी में दबा दें।
- रोग वाहक कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोरपिड 17.8 एस.एल. की 3 से 5 मि.ली. प्रति किलो बीज के दर से बीजोपचार करें।
- बुआई के समय मृदा में फोरेट 10 सी जी/1 कि.ग्रा. ए. आई. प्रति हे. का प्रयोग करें जो सफेद मक्खी एवं माहू के प्रकोप को कम करता है।
- डाईमेथिएट 30 ई.सी. की 1.7 मि.ली. या थियामेथोक्सम 25 डब्ल्यू. जी. को 0.30 ग्रा. प्रति लीटर पानी में घोलकर 14 दिनों के अंतराल में दो से तीन बार छिड़काव करें।

कवक जनित रोग :

- **सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोगः** वातावरण में अधिक नमी होने की दशा में इस रोग का संचारण होता है। यह कवक पौधों के अवशेषों व मृदा में रहता है। वातावरण में अधिक आद्रता होने की स्थिति में पौधों के तनो और फलियों पर हल्के धूसर रंग के असामान्य आकार के धब्बे दिखाई देते हैं, जिनका बाहरी किनारा गहरे से भूरे लाल रंग का होता है। अनुकूल परिस्थितिओं में यह धब्बे बड़े आकर के तथा अंत में रोग ग्रसित पत्तियाँ गिर जाती हैं। फूल बनाने की अवस्था में अनुकूल वातावरण मिलने पर यह रोग तेजी फैलता है, परिणाम स्वरुप पत्तियों, फूलों और अल्प विकसित फलियों के गिरने से फसल उत्पादन में 60 प्रतिशत तक का नुकसान हो सकता है।
- **एन्थ्रक्नोज रोगः** यह रोग एन्थ्रक्नोज कवक से होता है। यह मूलतः बीज जनित रोग है तथा फसल अवशेषों पर पाए जाते हैं। जब वातावरण का तापमान कम और आद्रता अधिक होती है, तब बीज अंकुरण से लेकर फली बनने की अवस्था तक यह रोग की आशंका बनी हो सकता है। यह रोग बीज–पत्र तथा तना, पत्ती एवं फलियों पर होता है। संक्रमित भाग पर अनियमित आकार के भूरे धब्बे लालिमा लिए हुए दिखाई देते हैं जो बाद में गहरे रंग के हो जाते हैं। बड़े होकर ये धब्बे पत्ती और फलियों को सुखा देते हैं, जिससे फसलों में क्षति बढ़ जाती है।

कवक जनित रोगों का नियंत्रणः

- पुरानी फसल एवं रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को खेत से हटा दें।
- स्वस्थ बीज तथा अवरोधी किस्मों का उपयोग करें।
- बीजों को बोने से पूर्व फफूंदनाशी जैसे– कार्बेन्डाजिम (2.0 ग्राम), केप्टान अथवा थीरम (2.5 ग्राम), बाविस्टिन (1.5 ग्राम) प्रति किलो बीज दर से बीजोपचार करें।